सन्त नन्दनार

लेखक

हृषीकेश शर्मा

प्रकाशक

दक्षिण भारत हिन्दुस्तानी प्रचार सभा,

मद्रास

[मूल्य ०—५—०

समर्पण

परमपूज्या भारत-माता की आज़ादी के दीवाने,
दक्षिण-भारत में हिन्दी-प्रचार के सुदृढ
आधार-स्तम्भ, स्वदेश के लिये
आत्मसमर्पण-कर्ता, अन्त्यजों के
'निर्बल के बल राम'

इस समय—
श्रीकृष्ण-जन्म-स्थान-प्रवासी

त्यागमूर्ति
पूज्य भाई जमनालाल बजाज

के

कर-कमलों में यह छोटी सी पुस्तिका उनके वर्धा
के अपने लक्ष्मीनारायणजी के मन्दिर को
अस्पृश्यों के लिये सदा खुला रहने
देने की पवित्र स्मृति में सादर
एव सप्रेम समर्पित ।

सदैव स्नेहभाजन—
हृषीकेश

पूज्य बापूजी के उद्गार !

परमात्मा की नजर में छूत अछूत कोई नहीं है। ब्राह्मण अपने बड़प्पन से या दूसरों पर प्रभुता दिखलाने की योग्यता से ब्राह्मण नहीं कहे जाते, बल्कि, अपने ज्ञान से, मनुष्य जाति की सेवा करने से, और अपने आपको सेवार्थ मिटा देने की योग्यता से ब्राह्मण कहे जाते हैं। यह उन्हीं का अधिकार है, यह उन्हीं का कर्तव्य है कि वे मनुष्य-जाति की सेवा करें।

अपने अदम्य साहस से, ईश्वर में अगाध श्रद्धा से, नन्द अहङ्कारी ब्राह्मणों को झुका सका था और दिखला सका था कि अपने अत्याचारियों से, जो अपने को मनुष्य जाति का सिरमौर समझते थे, वह कहीं महान था।

नन्द ने सभी बंधन तोड़कर मुक्ति पायी। मगर शोरोगुल से नहीं, वितण्डावाद से नहीं, किन्तु सच्चे स्वार्थ-त्याग से। उसने अपने अत्याचारियों को शाप नहीं दिया, कोसा नहीं, बल्कि वह तो उनसे अपना हक माँगने को भी झुकने को तैयार न था। परन्तु उसके चरित्र की महत्ता से, उच्चता से, शर्माकर उन्हें उसके साथ

न्याय करना ही पडा। अगर मनुष्यों की भाषा में हम कहें तो नन्द ने नटराज भगवान को पृथ्वी पर बुलाकर अपने अत्याचारियों की आँखें खुलवायीं। यदि हममें से कुछ लोग नन्द का अनुकरण कर सकें, उसका कुछ भाव हृदयंगम कर सकें तो यह देश फिर से पुण्यात्माओं का देश बन जाय। भगवान श्रीकृष्ण ने अपने कार्यों में और गीता में यह दिखाया है कि ईश्वर का सच्चा भक्त बनना हो तो हमें ब्राह्मण और भंगी में समबुद्धि रखनी चाहिये।

(यंग-इण्डिया)

प्रभु की प्रतिज्ञा !

"मैं सब के लिए एक सा हूँ। न मेरा कोई द्वेष्य है अर्थात् अप्रिय है और न कोई प्यारा ही है। भक्ति से जो कोई मेरा भजन करता है वह मुझमे है और मै उसमे हूँ। वह बड़ा दुराचारी ही क्यों न हो, यदि वह मुझे अनन्य भाव से भजता हो तो उसे महान साधु ही समझना चाहिये। क्योंकि उसकी बुद्धि का निश्चय अच्छा रहता है। अत-एव वह शीघ्र ही धर्मात्मा हो जाता है और नित्य परम शान्ति उसको मिल जाती है। हे कौन्तेय (अर्जुन)! यह निश्चय जानो कि मेरे भक्त का कभी नाश नहीं होता। हे पार्थ मेरे आश्रय से स्त्रियाँ, वैश्य और शूद्र अथवा अन्त्यज आदि जातियाँ भी परम गति को प्राप्त होती हैं!"

—गीता मे भगवान श्रीकृष्ण।

इस पुस्तक की क्या भूमिका लिखी जाय ?

कुछ समझ मे नहीं आता कि मैं इस पुस्तक के आरम्भ में क्या लिखूँ ? मैंने इस छोटी सी पुस्तिका में दक्षिण भारत के तमिल-प्रान्त के एक महान् ईश्वर-भक्त सत्याग्रही का सरल संक्षिप्त चरित्र लिखने की ढिठाई की है। वास्तव में नन्दनार जैसे महापुरुष का विलक्षण चरित लिखने की योग्यता मुझमें अणु-मात्र भी नहीं है। मैं तो अपने को उस पतितपावन सन्त की पवित्र पाद-धूलि पाने का ही अधिकारी समझता हूँ। जो पहले अत्यन्त हीन, नगण्य, अस्पृश्य पापी 'परया' था, हमारी ही तरह मनुष्य होते हुए भी तुच्छ कुत्ते की तरह जो दर-दर दुत्कारा जाता, वही थोड़े दिनों के बाद, अपने चरित्र-बल, सहन-शीलता, अहिंसा, प्रेम-बल और ईश्वर की सच्ची भक्ति से लोक-सम्मानित हुआ। आज झोंपड़ों से लेकर महलों तक उसका नाम-स्मरण करके सभी अपने को धन्य मानते हैं।

जिस समय उसने मनुष्य-मात्र के कल्याण के लिये अनेक कष्ट और अपमान सहकर सत्य की राह पकड़ी तथा रूढि प्रथा, या धर्म के नाम से प्रचलित बंधन-वचनों की हथकड़ी-बेड़ियों को तोड फेंका उसी समय 'यत' कृष्णस्ततो धर्मः, यतो धर्मस्ततो जय।'—[जहाँ ईश्वर का पक्का बल भरोसा है वहाँ धर्म है और जहाँ धर्म है वहाँ जय है]—का गगन-भेदी-जयजय-

4187

कार गूंज उठा। आज समाज में अस्पृश्यता का मुंह काला कर देने का साहस अङ्कुरित होकर लहलहा पौधा बन गया है सही, फिर भी, छोटी से छोटी बात के लिये अब भी हम अछूत के साथ पशु की तरह बर्ताव करते हैं। उसकी उन्नति देखकर नाक-भौं सिकोड़ते हैं। उसे कुए पर पानी नहीं भरने देते। उसके बच्चे पाठशालाओं में उच्च वर्ण के बच्चों के साथ पढ़ने को नहीं बैठ सकते। बाजार में उसके हाथ दूकानदार सौदा नहीं बेचता। वह बीमारी से मरता भी हो तो भी हम उसको नहीं छूते, दवा-दारू नहीं करते। अपना जूठा हम उसे खाने को देते हैं और फटे मैले कुचैले कपड़े-चिथड़े पहनने को। वह हमारी तरह साफ़-सुथरे हवादार घरों में नहीं रह सकता। रास्ते में चलते समय हमारे डर से उसे बार बार अपनी अस्पृश्यता की घोषणा करनी पड़ती है। जिस राह पर कुत्ते, गधे, या विधर्मी मनुष्य भी आजादी के साथ चल-फिर सकते हैं, वह उस पर चल-फिर नहीं सकता। ईसाई मिशनरियों को छोड़कर कोई मास्टर उसके बच्चों को पढ़ाने के लिये तैयार नहीं होता। इससे बढ़कर अत्यन्त घृणा-सूचक बर्ताव मनुष्य का मनुष्य के साथ और क्या हो सकता है ? हम लोग तो ऊँच और नीच, ब्राह्मण और अब्राह्मण के बखेड़े में पड़कर अपना सच्चा धर्म भूल से गये हैं। पर, भक्त-शिरोमणि महात्मा सूरदास के 'समदर्शी है नाम तिहारो'— इस पद के अनुसार भगवान समदर्शी हैं और उनके दरबार में

कोई ऊच नीच नहीं है। नन्द का चरित्र अन्य कहानियों या उपाख्यानों की तरह निरा कल्पनात्मक नहीं है, वह तमिल-भाषा के प्राचीन साहित्य मे एक ऊचे से ऊचे सच्चे ईश्वर-भक्त की सत्य और पवित्र ऐतिहासिक घटना है।

चार पाँच वर्ष हुए जब प्रातःस्मरणीय पूज्य गाधीजी ने दक्षिण-भारत मे भ्रमण करते समय अपने साप्ताहिक अग्रेजी 'यग-इण्डिया' और गुजराती 'नवजीवन' मे अन्त्यज साधु नन्दनार पर एक लेख लिखा था। उसे, और मद्रास के सुप्रसिद्ध पुस्तक-प्रकाशक जी ए नटेशन की कपनी से प्रकाशित अग्रेजी में लिखी हुई नन्दनार की जीवनी को पढने और तीन चार बार स्टेज पर तमिल मैं खेले गये 'नन्दनार' नाटक को ध्यान से देखने पर भारत की राष्ट्रभाषा हिन्दी मे भी स्वतत्र रूप से इस साधु पुरुष का सक्षिप्त चरित्र अवतरित करने की मेरे मन मे प्रबल इच्छा उत्पन्न हुई। उक्त साहित्य के आधार पर मैं इसे हिन्दी मे स्वतत्र रूप से लिख सका हूँ। अत. पूज्य बापूजी तथा मद्रास के हिन्दी-प्रेमी जी ए नटेशनजी का मै अत्यन्त कृतज्ञ हूँ। यदि इस पुनीत चरित्र को पढकर पाठकों को कुछ लाभ हुआ तो मैं अपना जीवन सफल समझूँगा।

दासानुदास,

हृषीकेश शर्मा

विषय-सूची

सन्त नन्दनार

१

जन्म और बाल्यकाल

चौदहवीं शताब्दी की बात है, कोई छः सौ वर्ष हुए होंगे, दक्षिण भारत के तंजौर जिले में आदनूर नामक ग्राम में एक बालक जन्मा था। उसका नाम था नन्द-नार* या नन्द। वह दक्षिण भारत में एक सच्चा महान् ईश्वर-भक्त और सत्याग्रही हो गया है जिसकी बराबरी शायद ही कोई कर सके। वह जाति का अछूत-अस्पृश्य था। उसके माता-पिता 'परया' जाति के थे। नन्द गरीब मा-बाप के घर में पैदा हुआ था। उसके जन्म-काल आदि का ठीक तौर से पता नहीं लगता। भला, कौन पद-दलितों, अस्पृश्यों

* नाम के आगे 'आर' लगाने की प्रथा तमिल-प्रान्त में है। जैसे, शास्त्रियार-शास्त्रीजी।

अन्त्यजो की जन्म-तिथि, साल-संवत, ग्रह-नक्षत्र वगैरह याद रखे ! हाँ, वह अछूत बालक दक्षिण भारत में एक हीन-अतिहीन समझी जानेवाली 'परया' जाति में जन्मा था। 'पैर' का तमिल भाषा में अर्थ होता है—'ढोल' और 'परया' का अर्थ हुआ-ढोल बजानेवाली अन्त्यजों-अछूतों की एक जाति। मद्रास प्रान्त में यह एक अति नीच जाति मानी जाती है।

इन अस्पृश्यों के घरो की, जिनमें ये रहते हैं, उन मुहल्लो की, जिनमें ये बसते है, और इनकी रहन-सहन की कहानी क्या कहें ? जैसी कि ढेड़ों या भंगी-चमारों की जिन्दगी होती है बस, उनसे भी गया बीता इनका जीवन समझिये। जितनी गन्दगी, मलिनता और घिनौनापन उनके यहाँ देखा जाता है• उतना ही नहीं, बल्कि उससे अधिक इन बेचारों के झोपड़ों में देख लीजिये। भंगी चमार जिस तरह मरे ढोरों का (मुरदार) माँस खाते हैं उसी तरह परया जाति के लोग

भी खाते हैं और ताड़ी-शराब वगैरह पीकर अपने दुखमय पतित जीवन का, उच्च जातियों द्वारा किये गये अपमान का, दुख भूल जाते है।

नन्द पढ़ा-लिखा न था। वह अपने लड़कपन में मुर्गियों, कुत्तों और सुअरों के बीच अपने साथियों के साथ खेला करता। कभी कभी सूअर के बच्चों को चराने के लिये इधर उधर ले जाया करता या मालिक के ढोर चराया करता था। लेकिन एक बात उनमें असाधारण देखी गयी। जब उसे कुछ समझ आयी, उसने अपना खेल-कूद बंद कर दिया। वह किसी पेड के नीचे मिट्टी के देवी-देवताओं की मूर्तियाँ बना बनाकर उनकी पूजा किया करता। उसके घर के लोग या बिरादरीवाले जब अपने देवी-देवता को प्रसन्न करने की इच्छा से मुर्गों या बकरो का बलिदान देते तब बेचारे उन गूंगे जीवों की करुणा भरी चीत्कारों से बालक नन्द का हृदय फटने लगता और उसकी आँखों से

दया के आँसू बहने लगते। हालांकि वह माँस खाता था, फिर भी देवी-देवताओ के सामने तड़पते हुए पशुओं को कटता हुआ अपनी आँखो से नही देख सकता था।

उसने एक नन्हा-सा मेमना (बकरी का बच्चा) पाल रक्खा था। वह उस मेमने को बहुत प्यार करता था। हमेशा उसे अपनी गोद में लिये फिरता। जहाँ वह जाता, वहीं मेमना भी साथ में जाता। नन्द उसे नरम नरम पत्तियाँ खिलाता, तालाब का ठंडा पानी पिलाता और उसे गोद में लेकर नाचता फिरता।

२

विचार संघर्ष

अब नन्द कुछ सयाना हो गया था। एक बार उसने बासी मांस खा लिया। उसे अजीर्ण हो गया। बड़े जोर का बुखार भी चढ़ आया। कई दिनो तक बीमारी

ने उसका पिंड न छोड़ा। नन्द जितने दिनों तक बिछौने पर बीमार पड़ा रहा उसका सच्चा दोस्त और साथी मेमना उसके पास 'मैं--मैं' करता बैठा रहा। कुछ दिनों के बाद नन्द चंगा हो गया। जब वह बीमार पड़ा था, उसकी माँ ने ग्राम-देवी से मनौती मनायी कि जब मेरा बेटा अच्छा हो जायगा तब देवी को एक बकरा बलि चढ़ाऊँगी। जिस दिन यह मनौती मनायी उसी दिन से नन्द चंगा होने लगा। इससे उसकी माँ का विश्वास देवी की मनौती पर और भी पक्का हो गया। देवी को बकरा चढ़ाने का समय आया। घर में इतना पैसा कहाँ जो बाज़ार जाकर बकरा खरीदा जावे? अब बकरा आवे तो कहाँ से आवे? आखिर नन्द के माँ-बाप उसके प्यारे मेमने को ही, उसके बिना जाने, ले गये और देवी को चढ़ा आये। माँ-बाप की मनौती पूरी हुई। पर नन्द ने जब यह सुना तो उसके हृदय पर भयङ्कर आघात पहुँचा। कई

दिनों तक वह अपने प्यारे मेमने के वियोग में सिसक-सिसक-कर रोता रहा।

नन्द के माता-पिता एक अय्यर (ब्राह्मण) के खेत में काम किया करते थे। थोड़ी सी मज़दूरी मिल जाती थी। उसी से उनका निर्वाह होता था। एक बार उसके मालिक का बेटा बीमार पड़ा। नन्द ने अपनी माँ से पूछा, "क्यों अम्मा, अपने मालिक (अय्यर) का बेटा जब बीमार पड़ता है तो उसके माता-पिता क्या करते हैं? क्या वे भी देवी के सामने बकरा काटते हैं?"

"नहीं, नहीं, वे लोग तो वैद्य को बुलाकर दवाई कराते है। देव-मन्दिरों में जाकर प्रार्थना करते हैं। वे बकरा नहीं चढ़ाते, नारियल चढ़ाते हैं।"—माँ बोली।

नन्द ने पूछा, "तब फिर हम अपने देवता को किसलिये बकरे और मुर्गे चढ़ाते हैं?"

"बेटा, हमारे देवता जुदे हैं, उन लोगों के जुदे

हैं। हमारे देवता भयङ्कर होते हैं। बकरे का खून पिये बिना वे तृप्त नहीं होते।"

"अगर हम भी अपने अय्यर मालिक की तरह मन्दिरों में जाकर प्रार्थना करें तो?" नन्द बोला।

"लड़के! तू पागल तो नहीं हो गया। हम कहीं मन्दिरों में जा सकते हैं? हम उनकी तरह वहाँ प्रार्थना कैसे कर सकते हैं? अरे, हम तो उनके घरों के पास तक नहीं फटक सकते; फिर मन्दिर में जाकर देवता की प्रार्थना करने की बात तो बहुत दूर है।"

माँ की बातों से नन्द को तसल्ली न हुई। उसकी शंका का समाधान न हुआ। उसने अपने मन में दृढ़ निश्चय किया कि 'अब, अगर मैं बीमार पड़ा तो इसकी खबर माँ-बाप को न होने दूँगा और ब्राह्मणों के मन्दिरों में जाकर देवता की प्रार्थना करूँगा, मुर्गे-बकरे न कटवाऊँगा।' कभी वह यह भी सोचता, हम उनके देव-स्थानों में क्यों नहीं जा

सकते ? मैं ब्राह्मणों के देवताकी प्रार्थना क्यों नहीं कर सकता ? क्या हम लोगों की जिन्दगी इतनी खराब है, क्या हम इतने पापी हैं कि हम उनके मन्दिरो में नहीं जाने पाते ?

३

आत्म-शुद्धि की ओर

नन्द के मालिक के खेत में एक कुँआ था। वह रोज देखता कि उसका अय्यर-मालिक या उच्च वर्ण के लोग ही उस कुँए पर आकर पानी भरते हैं। परन्तु उसका बाप या उसकी बिरादरी के लोग वहाँ पानी भरने नहीं आते। उन्हें गंदे तालाबों या नदी-नालों का ही पानी पीना पड़ता। मेरे मालिक का बेटा कितना सुन्दर और साफ़-सुथरा रहता है! नन्द ने सोचा कि मेरे भाई-बंद तो शराब ताड़ी पीकर आते हैं और घर में लड़ते-झगड़ते या मार पीट करते हैं।

हमारे मालिक-मालकिन न तो ताडी पीते हैं, न लड़ते-झगड़ते हैं। वे लोग कैसे साफ़-सुथरे रहते हैं! हमारा रहन-सहन कितना गंदा है? अरे, हम लोगो को घोर नरक भी अपने यहाँ जगह देने में नाक सिकोड़ लेगा! इसी गन्देपन के कारण ब्राह्मणो के देवता हमारी प्रार्थना क्यों सुनेंगे?—उसके मन में यही विचार रातदिन उठते रहते और उसे चैन न लेने देते। अन्त में, एक रोज़ नन्द ने निश्चय किया कि अब से वह ताड़ी-शराब न पियेगा और न मांस खायगा। पर, कहीं वह मांस खाना छोड़ दे तो उसे एक न एक दिन ज़रूर भूखे मरना पड़ेगा। और, कुछ खाने को मिलेगा भी कहाँ से? इसलिये उसने इतनी छूट रक्खी कि जो दूसरी खुराक न मिली तभी मांस खाऊँगा। इसके बाद भी, उसके दिल में यह विचार उठते ही रहते कि "ये ब्राह्मण लोग ऊपर से जितने स्वच्छ और सुघड़ दीख पड़ते हैं

क्या भीतर, शरीर के अन्दर, मन और आत्मा में भी उतने साफ-सुथरे हैं? क्या उनका रक्त, मांस और अस्थि हमसे जुदा हैं? क्या इनके पेट में मल-मूत्र नहीं भरा है? ये ब्राह्मण क्यों जन्मे और हमने 'परया-जाति' में जन्म क्यों पाया? ताड़ी, शराब और मांस छोड़ देने के बाद भी क्या उनके देवता हमारे ऊपर अनुग्रह न करेंगे? अम्मा कहती हैं,—ब्राह्मण जैसा होने के लिये और उनके देवता का कृपा-पात्र बनने के लिये हमें एक जन्म तो क्या, हजारों जन्म लेने की आवश्यकता है। हमारे कर्म कैसे हैं और ब्राह्मणों के कर्म कैसे हैं? कितना अन्तर! क्या हम भी वैसे स्वच्छ और सुघड नहीं हो सकते?" इस तरह वह रोज़ घण्टों मन ही मन सोचा करता। रात में उसे नींद नहीं आती थी। वह अँधेरी रात में, निःशब्द निशा—काल में, नीले आकाश में चमकते हुए तारों को टकटकी लगाकर

देखता रहता और ये ही विचार उसके दिमाग़ में चक्कर लगाया करते।

४

सहानुभूति का फल

एक दिन नन्द खेत में अपने मालिक के ढोर चरा रहा था। खेत से थोड़ी दूर ब्राह्मणों के कुछ बालक गुल्ली डंडा खेल रहे थे। उनमें नन्द के मालिक का बेटा भी था। एक बार गुल्ली उछलकर नन्द के पास आकर गिरी। नन्द जानता था कि मैं इसे छू नहीं सकता। उसके मालिक का लड़का गुल्ली लेने दौड़ा हुआ आया। नन्द ने उँगली के इशारे से ज़मीन पर पड़ी हुई गुल्ली दिखायी। मालिक का लड़का उसे उठाकर भागा। पर शीघ्र ही वह ठोकर खाकर गिर पड़ा। पत्थर की चोट से उसका घुटना -लुहान हो गया। खून बहने लगा। अपने

मालिक के बेटे की यह हालत देखकर नन्द उसके पास दौड़कर आ पहुँचा। मालिक के बेटे को सख्त चोट लगी थी। उसका घुटना छिल गया था। वह दर्द के मारे नहीं उठ सकता था। नन्द का हृदय सहानुभूति से उमड़ उठा। वह अपने मालिक के बेटे की मदद करने, उसकी सख्त चोट के प्रति अपनी हमदर्दी बतलाने, आगे बढ़ा। परन्तु एक परया-अछूत का लड़का उसकी मदद कैसे कर सकता? मालिक के बेटे ने अपने नौकर के बेटे नन्द से कहा: "ओ कुत्ते! भाग जा यहाँ से। चल, दूर हट! क्या मुझे छूना चाहता है? तू मेरे पास क्यों आया?" यह कहकर उसने एक पत्थर उठाकर नन्द पर फेंककर मारा। पत्थर नन्द की कनपटी में जोर से लगा। वह तिल-मिला कर ज़मीन पर गिर पड़ा। कनपटी से खून बह निकला। ब्राह्मणों के दूसरे खिलाड़ी लड़के उसके मालिक के

को हाथ पकड़कर ले गये; पर इस नन्द को

कौन उठाता जो पत्थर की चोट से जमीन पर पड़ा छटपटा रहा था। किसी ने उसे हाथ का सहारा तक न दिया। जब नन्द को कुछ होश आया तो वह अपनी कनपटी हाथ से दबाये तालाब पर गया। कनपटी का खून धोया और हाथ मुँह धोकर अपने घर चला गया। नन्द ने पहली ही बार अपने जीवन में मनुष्य का खून देखा था। एक ब्राह्मण और अछूत 'परया' के खून में कोई फ़र्क तो था नहीं, और एक पशु के खून में भी कोई अन्तर उसे न मालूम पड़ा। चोट लगने पर जिस तरह पशु चीखते चिल्लाते हैं, उसी तरह मालिक ब्राह्मण के बेटे ने भी चीख मारी थी! तब फिर ब्राह्मण और एक परया में अन्तर क्या रहा? और, मैं तो प्रेम और सहानुभूति से प्रेरित होकर अपने मालिक के बेटे के पास दौड़ा हुआ गया;लेकिन उसने उल्टे मुझे कुत्ते की तरह दुत्कार दिया और पत्थर मारा। यह क्या बात है?

ब्राह्मणों के लड़के इतने बेरहम होते होंगे? और ऐसे ब्राह्मणों की प्रार्थना और उनकी पूजा देवता स्वीकार करता है और दयालु 'परया' की नहीं! यह विचार नन्द के मन में उठ-उठकर उसे असमंजस में डालने लगे।

५

अपने विचारों का प्रचार और सफलता

नन्द अब बड़ा हो गया था। उसकी बुद्धि भी तेज़ थी। तर्क और दलील भी वह खूब किया करता। जितनी बातें वह सोचता या समझता था, उनका प्रचार करने लगा। वह अपने साथियों को इस बात की शिक्षा देने लगा कि हम लोग जब बीमार पड़ें तब अपने देवता को पशु का बलिदान न दें, शराब ताड़ी न पियें, मुरदार मांस न खायें, और साफ़-सुथरे रहने की आदत डालें। वह स्वयं भी उस दिन से

सफाई पर अधिक ध्यान देने लगा। सुबह-शाम नहाता, अपने कपड़े धोता और एकाग्र मन होकर अपने सिरजनहार का ध्यान करता था। उसकी शिक्षा का प्रभाव उसके साथियों पर भी पड़ने लगा। वे लोग भी नन्द की तरह साफ़-सुथरे रहने और ईश्वर का ध्यान करने लगे।

एक बार आदनूर गांव के 'परया' लोगों ने काली माई को एक भैंसा काटकर चढ़ाया। लोगों ने खूब ताड़ी-शराब पीकर भर-भर पेट मांस खाया। भैंसा था रोगी। बीमार भैंसे का मांस खाकर वे लोग बीमार पड़ गये। उनमें से कई तो बुरी मौत मरे। इस बीमारी के झपाटे में नन्द का बाप भी आ गया और इस दुनिया से चल बसा। दुखी होकर चुपचाप बैठे रहने के बदले नन्द ने बीमारों की सेवा-शुश्रूषा करने के लिये एक "सेवा-संघ" स्थापित किया। अपने कुछ उत्साही साथियों को लेकर वह अपनी जाति

के बीमार पड़े हुए लोगों के घर घर पहुँचा और बीमारों की मदद करने लगा। मरे हुए लोगों के शव को मसान में ले जाकर वह उनका दाह-कर्म करता और उनके कुटुम्ब-परिवार और बालबच्चों की देख भाल करता। पर इस सेवा-शुश्रूषा से खुश होने के बदले गांव के बूढ़े बुजुर्ग लोग नन्द पर बहुत नाराज़ हुए। उस पर यह इल्जाम लगाया गया कि, 'नन्द मुर्गे-बकरे और भैंसे देवी के सामने नहीं काटने देता है, इस सनातनी-प्रथा के विरुद्ध वह अपने विचारों का प्रचार करता है, इसी से देवी इतनी नाराज़ हुई, नहीं तो गांव के ऊपर यह आफ़त क्यों आती?'

नन्द भी बीमार पड़ गया। उसे दस्त और 'कै' की बीमारी ने घर दबाया। इससे ग्राम के बड़े-बूढ़े परया लोग बहुत खुश हुए। उसे वे सलाह देने लगे, देवी को झटपट एक बलि देकर प्रसन्न कर ले, नहीं तो अब तेरी खैर नहीं। उसकी माँ भी दुखित

होकर बोली, 'अरे! तेरा बाप तेरे ही पाप के कारण मर गया और अब तू भी बे-मौत मरेगा। देख, हठ मत कर, देवी की मनौती मान।' परन्तु नन्द अपने निश्चय पर अटल रहा। वह बोला, 'माँ! बकरा काटकर ही अगर हम जीवित रह सकते हों तो जीने के बदले मर जाना क्या बुरा है?' नन्द के साथी भी चिन्तित हुए—'नन्द मर जायगा तो फिर काम किस तरह चलेगा? और नहीं तो सेवा-संघ द्वारा उठाये हुए काम को भविष्य में सफल बनाने के लिये ही उसका जीते रहना जरूरी है।' नन्द ने उन्हें समझाया कि ईश्वर हम लोगों की परीक्षा ले रहा है। ऐसे कठिन समय में, मरते दम तक, जब हम अपना इरादा न छोड़ें तभी हम मनुष्य हैं और तभी हमारे पक्के निश्चय का मूल्य है। तुम लोग मेरे लिये ईश्वर से प्रार्थना करो, बस; मैं बहुत जल्दी चंगा हो जाऊँगा। जो कहीं तुम लोगों की प्रार्थना से मैं बच

गया तो तुम अपने विरोधियों के सामने सिद्ध कर सकोगे कि नन्द बकरों के बलिदान से नहीं, बल्कि हमारी प्रार्थना के बल ही पर जी उठा है। अब नन्द के साथियों को कुछ हिम्मत बँधी। वे बड़े जोर से शिव-शिव पुकारने और नन्द की आयुकामना के लिये ईश्वर से प्रार्थना करने लगे। दूसरी तरफ, बड़े बूढ़े भी अपनी सूझ-समझ के अनुसार नंन्द की भलाई के लिये अपनी करतूत कर रहे थे। वे नन्द की हठ-धर्मी और बेवकूफ़ी पर मन ही मन कुढ़ रहे थे। उन्होंने उसकी माँ को समझाया। वह बेचारी बड़ी भोली-भाली थी। उनकी बातों में फँस गयी। बोली—

पास रुपया-पैसा तो है नहीं। हाँ, घर में कुछ बरतन पड़े हुए हैं, सो ले जाइये और उनकी कीमत से देवी को बकरा चढ़ा दीजिये। किसी तरह मेरे नन्द की जान बचे। कहीं, मेरा लाल बे-मौत मर न जावे?

नन्द ने रात भर बिछौने पर पड़े ही पडे भजन

किया। एक क्षण भर भी उसने भगवान् का नाम स्मरण बन्द न किया और न उस रात में वह सोया ही। उसकी इस भक्ति से प्रसन्न होकर पास के तिरुपुंकर नामक देव-स्थान के महादेव ने उसके सिरपर हाथ रख कर स्वप्न दर्शन दिये। अब तो नन्द के आनन्द का ठिकाना न रहा। सवेरा होते ही वह भला-चंगा हो गया और दो ही दिन में बिछौने से उठकर चलने-फिरने लगा। उसके साथियो ने 'हर हर महादेव' के जय-जयकार से सारा गाँव गुँजा दिया।

बड़े-बूढ़े लोगों में से कुछ तो यह मनौती मना रहे थे कि यह नास्तिक छोकरा (नन्द) मर जाय तो अच्छा हो। पर नन्द तो जी उठा, मरा नहीं। इधर उसकी माँ घर के तमाम बासन-भांड़े बेचकर बकरे की बलि दे चुकी थी।

अब नन्द का संघ भी बढ़ने लगा। जो उसके साथी

उसे छोड़-छोड़कर चले गये थे वे फिर वापस आ-आकर नन्द के संघ में शामिल हो गये। उस पर उनकी श्रद्धा भी बढ़ने लगी और हमेशा के लिये उसके सच्चे साथी बन गये। अब नन्द का भी हौसला बढ़ा। उसने सोचा, जिन तिरुपुंकर मन्दिर के महादेव ने इस तरह उसको स्वप्न में आकर दर्शन दिये, क्या वे प्रत्यक्ष दर्शन न देंगे? क्या हम उनके मन्दिर में नहीं जा सकते? परया लोग भी तो मन्दिर की थोड़ी-बहुत सेवा करते हैं। कुछ मन्दिर की जमीन जोतते हैं; कुछ बाग-बगीचों में मजदूरी करते हैं; कुछ लोग मन्दिरों में आरती के समय बजनेवाले नौबत नगारों पर चढ़ाने के लिये चमड़ा तैयार करते हैं। गोरोचन नामक एक सुगन्धित वस्तु जो पशुओं की हड्डियों से निकाला जाता है और देव-पूजा में बरता जाता है, उसे भी हम ही तो मन्दिरों में पहुँचाते हैं। नन्द ने एक दिन मनोरथ किया—तिरुपुंकर के

महादेव के लिये कुछ पूजा की सामग्री लेकर जाऊँ। पहले तो वह इन सब चीजों, गो-रोचन, वग़ैरह को बेचता था। अब उसने देव को भेंट करने का विचार किया। एक रोज शनिवार को नन्द तथा उसके साथियों ने खूब स्नान किया। उसने साफ़-सुथरे धुले हुए वस्त्र पहने, और ललाट पर भस्म लगाकर कुंकुम की गोल बिंदी लगायी। शरीर में भस्म रमाये, पूजा की सामग्री एक थाली में सजाकर भजन गाते गाते वह अपने संघ को लेकर तिरुपुंकर की ओर रवाना हुआ। वहां पहुँचकर उसने अपने साथियों के साथ तीन बार महादेव के मन्दिर की परिक्रमा की और पुजारी के पास अपनी पुकार पहुँचायी। मन्दिर के अन्दर से दो सेवकों ने आकर उसकी भेंट पूजा की सामग्री लेने की कृपा की।

संध्या हो चुकी थी। महादेव की आरती और दर्शन का समय समीप आ पहुँचा। नन्द और

उसके साथी मन्दिर के बड़े फाटक के ठीक सामने जाकर खड़े हो गये। मूर्ति के सामने पत्थर से बनी हुई नन्दी की एक भारी मूर्ति है। दक्षिण के सब नन्दियों में से यह एक बड़ा नन्दी है। पहले, उस नन्दी से ईश्वर की मूर्ति छिप जाती थी। बाहर से किसी को मूर्ति के दर्शन नहीं होने पाते थे। नन्द बाहर ही से ईश्वर की मूर्ति के दर्शन करना चा था। उसके दुःख की सीमा न रही। वह उसके साथी सिर्फ़ घण्ट की ही आवाज सुन सकते या दर्शनार्थ आने-जानेवाले भक्तों को ही देख पाते थे। उसे तिरुपुंकर के महादेव की मूर्ति के दर्शन किसी तरह नहीं हो सकते थे। नन्द की आंखों से आँसुओं की धारा बह चली। गो-रोचन और धूप की सुगंध से प्रसन्न होने के बदले उसका दिमाग़ चक्कर खाने लगा। वह खड़े खड़े सोचने लगा, 'मुझ पतित पापी परया को कैलासपति पार्वतीश्वर के दर्शन

कहाँ से हों ? मेरे पाप इस नन्दी के रूप में सामने खड़े हैं।' यह कहकर वह फूट-फूटकर रोने लगा। यहाँ तक रोया कि बेहोश होकर जमीन पर गिर पडा। नन्द मुँह के बल भूमि पर पड़ा हुआ था और उसने अपने दोनों हाथ भगवान को प्रणाम करने के लिये जोड रक्खे थे। मूर्च्छित पडे हुए नन्द को किसी ने उठाया तक नहीं। बडी देर के बाद वह होश में आया तो सब ने साश्चर्य एक चमत्कार देखा, कि नन्दी की मूर्ति एक ओर झुक गयी है, और तिरुपुंकर नाथ शंकर के दर्शन अच्छी तरह हो रहे हैं। अब नन्द के आनन्द और आश्चर्य का ठिकाना न रहा। वह आनन्द के मारे पागलों की तरह नाचने लगा। महादेव के ध्यान में डूबे हुए नन्द को नाचते और नन्दी की एक तरफ झुकी हुई मूर्ति को देखकर सब लोग अपनी सुध-बुध भूल गये और नन्द के दर्शन करने के लिए इकट्ठे होने लगे।

तिरुपुंकर महादेव के मन्दिर में आज भी नन्दी की वह मूर्ति एक ओर झुकी हुई दीख पड़ती है और यात्रियों को आश्चर्य में डाल देती है।

६

पूर्ण-विश्वास

नद को पक्का विश्वास हो गया कि भगवान ने उसपर दया की है। वह सोचने लगा, प्रभु के इस अनुग्रह का बदला किस तरह दूँ? तिरुपुंकर के मन्दिर के पास कोई तालाब न था। जल के बिना लोगों को, खास कर यात्रियों को, बड़ा कष्ट होता था। नन्द तथा उसके साथियों ने तालाब खोदना शुरू किया। और सवेरा होते होते सरोवर तैयार हो गया। वह सुन्दर जलाशय अब तक मौजूद है। इस तालाब के बारे में एक ऐसी दंत-कथा प्रचलित है कि महादेवजी ने तालाब खोदते समय नन्द की सहायता

के लिये अपने पुत्र विघ्न-विनाशन विनायक को भेजा था। नहीं तो इतना विशाल और सुन्दर सरोवर जल्दी में कैसे खुद कर तैयार हो जाता।

नन्द अपनी अभिलाषा पूर्ण कर साथियो समेत घर लौट आया। अब वह प्रतिदिन नियम से ध्यान-मग्न होकर महादेव का भजन करता और अपने मालिक के खेत में मज़दूरी भी। उसका बड़ा मालिक मर गया था। मालिक का बेटा, जिसने गुल्ली-डंडा खेलते समय नन्द की कनपटी पर पत्थर मारकर जिन्दगी भर के लिये निशानी कर दी थी, उसका मालिक बना। इस नये मालिक, नौजवान अय्यर ने तिरुपुंकर महादेव के नन्दी के झुक जाने की बात पर विश्वास न किया। 'कौन जानता है, किसने देखा? नन्दी की मूर्ति पहले ही से झुकी हुई होगी। हम तो इतना भर जानते हैं कि नन्द एक ईमानदार सच्चा मेहनती नौकर है। अगर हमारे यहाँ सच्चाई के साथ मज़दूरी करता रहेगा

तो उसको पेटभर खाना और कपड़ा देते रहेंगे।'— उसके नये मालिक ने निश्चय किया। अब नन्द की दशा भी सुधरी। उसे मज़दूरी भी भरपूर मिलने लगी। वह तिरुपुकर के भगवान के लिये गोरोचन तथा नौबत मढ़ने के लिये चमड़ा बार बार भेजने लगा। इसी बीच में वैदीश्वरन कोविल (मन्दिर) में एक महोत्सव हुआ। खबर पाते ही नन्द भी अपने संघ को लेकर तीर्थ-यात्रा के लिये रवाना हुआ। इस उत्सव में भगवान की मूर्ति को ध्वजा, पताका, तोरण, कलश आदि से राजे हुए रथ में पधराकर मन्दिर के आस-पास की गलियों में घुमाया जाता है। उस दिन परया लोगों को दूर से देव-दर्शन करने की स्वतंत्रता रहती है। नन्द ने अच्छी तरह दर्शन किये। उस मेले में एक जगह एक ब्राह्मण पंडित कथा बांच रहा था। श्रोताओं की बड़ी भीड जमा थी। नन्द भी कथा सुनने खड़ा हो गया। उसने कथा-वाचक जी के मुंह से चिदम्बरम

का पवित्र माहात्म्य सुना। ये शब्द नन्द के कानों में गूंज उठे—'चिदम्बरम अत्यन्त पवित्र स्थान है। वह स्थल पवित्रता को भी पवित्र करनेवाला है, विश्वनाथ की पुरी काशी और सेतुबन्ध रामेश्वर से भी पवित्र है। उस चिदम्बरम में भगवान नटराज की सुन्दर झाँकी होती है। उनके हाथ में डमरू है और वे परम मनोहर नृत्य करते हैं।'

नन्द 'नटराज' का वर्णन सुनकर मन ही मन सोचने लगा, 'नटराज के हाथ में डमरू? क्या वे भी हमारी ही तरह 'परया' हैं? हम मुरदार चमड़े से मढ़े हुए ढोल को बजाते हैं और वह भी बजाते हैं। नटराज अवश्य 'परया' हैं।' वह आनन्द से पुलकित हो उठा। अब वह कथा और भी ध्यान देकर सुनने लगा—'भगवान नटराज का दूसरा हस्त समस्त भुवनों को थामे रहता है। वाम हस्त में अग्नि है, उसका मतलब है; वे जब चाहें सारी सृष्टि को भस्म कर

सकते हैं। क्योंकि संसार की सृष्टि-स्थिति और संहार के वे ही कर्ता-धर्ता हैं। जो व्यक्ति उनके दर्शन करता है वह चाहे जो हो—चण्डाल हो या परया, क्षणभर में मुक्त होकर संसार-सागर से पार हो जाता है।'

नन्द कथा-वाचक के एक एक शब्द को तन-मन की सुध बिसराकर पी रहा था। उसकी आँखों के सामने नटराज की सुन्दर मूर्ति नाच रही थी। उसने अत्यंत अधीर तथा विह्वल होकर कथा बाचनेवाले से पूछा—'महाराज! भला, यह तो बताइये कि वह चिदम्बरम है किस दिशा में?

'कोलिडम नदी के उत्तर की तरफ़। यहाँ से एक दिन का रास्ता है।' कथावाचकजी बोले।

नन्द ने पूछा, 'क्या वे चाण्डाल को भी तार

'हाँ अवश्य!!! तुम कौन हो भाई? ज़रा हमारे

पास तो आओ, सब बातें बता दूँगा।' कथावाचक ने कहा।

श्रोताओं में से एक मनुष्य, जो कि नन्द को पहचानता था, बोला—'महाराज! यह नन्द तो आदनूर गाँव का 'परया' है। इसे छुइएगा नहीं। नहीं तो आपको स्नान करना पड़ेगा। हाँ, परन्तु यह शङ्कर का बड़ा भक्त है। हमेशा चमड़ा और गो-रोचन भगवान के मन्दिर में भेजा करता है।'

नन्द कथा-वाचक के पास तो नहीं गया; परन्तु उसने दूर ही से फिर पूछा—'क्या मुझ जैसे पापी को नटराज इस संसार से तार देंगे?'

'हाँ हाँ, क्यो नहीं! पुराणों में ऐसा ही तो लिखा है। यह बात कहीं झूठ हो सकती है?'

नन्द ने बड़े आदर के साथ कथा कहनेवाले महाराज को सिर झुकाकर प्रणाम किया और तुरन्त वह उत्तर की ओर कदम बढ़ाकर चल पड़ा। उसके

साथियों में से एक ने पुकारकर कहा—'अरे भाई, हमें तो पश्चिम की तरफ़ चलना है, उत्तर की तरफ कहाँ सरपट भागे जा रहे हो?

नन्द ने एक क्षण भर के लिये रुककर कहा—'चितम्बरम की ओर जा रहा हूँ।'

उसके साथी बोले—'अरे भाई, हमें साथ में न ले चलोगे? और इस अंधेरी रात में बिना रास्ता जाने कहाँ जाओगे?'

'सीधे उत्तर की तरफ़ चले जायँगे, और सवेरा होने पर किसी राहगीर से चिदम्बरम का रास्ता पूछ लेंगे।' नन्द ने कहा।

'भाई साहब! इस तरफ़ कहीं कोई जाता है? हम लोग, यहाँ रात में आज छुट्टी के कारण यह उत्सव देखने आ पाये। सवेरा होते ही हमें अपने मालिक के काम पर हाज़िर होना है। हमारे मालिक सख्त नाराज़ हो जायँगे। याद है न? हम दूसरों

के गुलाम हैं। मालिक की मर्ज़ी के बिना हमें इधर से उधर रेंगने का भी कोई हक नहीं है। हम अगर, अपना काम छोड़कर जायँगे तो ईश्वर को भी यह मंजूर न होगा।'

'ईश्वर को भी मंजूर न होगा' सुनकर नन्द रुका। ईश्वर के नाम से वह तुरन्त खड़ा हो गया और अपने साथियों से बोला—'अच्छा भाई, हाँ, हम लोग गुलाम-पराधीन-तो हैं ही। चलो, अपने मालिक से छुट्टी लेकर कल चिदम्बरम चलेंगे।'

७

संकल्प की विजय

नन्द अपने साथियों के साथ घर वापस लौट आया। वह चिदम्बरम नहीं जा सका, इससे उसके चित्त को शान्ति नहीं थी। हृदय में आग की ज्वाला भक भक जल रही थी—'परया-जाति में पैदा हुआ

हूँ, हर रोज उच्च वर्णवालों की गालियाँ खानी पडती हैं, मालिक के द्वार पर बे-इज़्जती होती है, मजूरी करते हुए भी 'परया' बना रहना, अनेक जन्म-जन्मान्तर में भी मोक्ष का न मिलना, यह सब मै कैसे बर्दाश्त कर सकता हूँ ? अगर मै चिदम्बरम पहुँच जाऊँ तो तुरन्त मुझे मोक्ष मिल सकता है। इस मोक्ष-प्राप्ति को मैं क्यो छोडूँ ?' चिदम्बरम जाने की धुन नन्द के सिर पर सवार थी।

वह दूसरे दिन अपने मालिक के खेत पर काम करने गया। पानी सींचा और दोपहर को मालिक से छुट्टी लेने गया। मालिक घर पर न थे। उनके आने की राह देखते देखते दिन ढल गया। नन्द निराश होकर चला आया। दूसरे दिन वह फिर छुट्टी माँगने मालिक के यहाँ गया। मालिक बीच रास्ते में ही मिल गये। वे ताना मारते हुए नन्द से बोले—क्यों, कहाँ भटकते हो, कल तुम दोपहर

को कहाँ थे? रोज कीर्तन और उत्सव में मग्न रहते हो, अपने खेत का भी कुछ ख्याल है तुम्हें? पड़ोसी ने नाले का पानी अपने खेत में घुमा लिया है और तुम्हारे उस साथी ने खेत की मेंड़ ऐसी बना दी कि हमारे खेत से उसके खेत की हद बढ़ गयी है।'

नन्द ने देखा कि मालिक इस वक्त बिगड़े हुए हैं। ऐसे मौके पर अपनी छुट्टी का उनके सामने जिक्र छेड़ना ठीक नहीं। कौन जाने क्या नतीजा हो, अभी चुप रहना ही बेहतर है।

इधर नन्द के साथियों को भी उसकी बात पर विश्वास न होता। वे अपने दिल में सोचते—'नन्द तो हठी हो गया है! कहीं हम जैसे पापियों को अपने इस जीवन में नटराज के दर्शन करने से मुक्ति मिलेगी? यह परया तो पागल हो गया है-पागल!'

नन्द को संसार का माया-जाल, दुनियावी रास्ता,

अच्छा न लगता था। वह हमेशा—आठों पहर—विचारों में डूबा उदास बना रहता।

एक दिन, जब सूर्य भगवान अस्त हो रहे थे, वह संध्याकाल के उस सुन्दर दृश्य को बड़े ध्यान से देख रहा था। सूर्य की सुनहरी प्रभा को देखकर, उस दिन का कथा-वाचक के मुंह से सुना हुआ श्री नटराज का वर्णन उसे याद आया। वह मालिक के खेत से हाथ में हंसिया और कुल्हाड़ी लिये घर को लौट रहा था। उस संध्या के सुवर्ण-राग की शोभा से भगवान नटराज की अंग-छवि की तुलना करते-करते नन्द ज्यों का त्यों बड़ी देर तक आकाश की ओर देखता हुआ अचल भाव से, पत्थर की तरह, खड़ा रहा। उसके एक साथी ने उसे पुकारा। उसने कुछ जवाब ही न दिया। एक ने उसके पास जाकर और उस का हाथ झकझोर के कहा—'भाई नन्द! तुम तो यहाँ ध्यान में मग्न खड़े हो, वहाँ तुम्हारे मालिक की गैया

मर गयी है।' नन्द कुछ न बोला। उसे बड़ी देर के बाद होश हुआ। वह बोला—'भाई, मैं क्या कहूँ? बस, आनन्द ही आनन्द था! वहाँ सूर्य की सुवर्ण प्रभा में मेरे नटराज नाच रहे थे। क्या तुम लोगों ने नहीं देखा? "यह तो पागल हो गया है" कहकर लोग नन्द को, उसका हाथ पकड़कर, घसीटते हुए उसके घर ले चले। ग्राम के बूढ़े लोग नन्द का हाल सुनकर बहुत खुश हुए। वे आपस में कहने लगे, देखोजी! देवी नन्द के पाप का बदला ले रही है। कुछ लोग दोनों हाथ ऊँचे उठा-उठाकर जोर-जोर से मनौती मनाने लगे—'हे माता, नन्द की रक्षा करो, वीरा देवी, नन्द को उबारो, हे पच्चै अम्मा! नन्द को अच्छा कर दो, हे काली माई! इस लड़के को बचाओ।' नन्द मुसकुराकर बोला—'अरे! मुझे तो बचायगा मेरा नटराज।' किसी ने उसकी मानसिक स्थिति को पहचानने की कुछ भी कोशिश न की। गाँव के लोगों ने

तो नन्द का पागलपन उतरवाने के लिये देवी को फिर से बकरा चढ़ाने का निश्चय किया। जब नन्द ने यह सुना तो वह बेचारा जा-जाकर सबके पैरों पड़ा। पर किसी ने उसकी एक न सुनी। एक बुड्ढे परया ने तो देवी को बलि चढ़ाये हुए बकरे का खून लाकर उसके सिर पर छिड़क दिया। नन्द इसे बर्दाश्त न कर सका। वह चीख मारकर वहाँ से भागा। लोग उसके मालिक के पास दौड़े हुए गये। मालिक बोला—'उस बेवकूफ़ को यहाँ पकड़ लाओ, मैं मिनट भर में उसे सीधा कर दूँगा।"

गाँववाले अब नन्द के पीछे पड़े। कोई उसे डराता, कोई धमकाता, तो कोई उसकी नकल करता और कोई उसे धूर्त-पाखण्डी कहता। पर नन्द पर इसका कुछ असर न हुआ। उसने अपने मन में निश्चय किया—या तो अब मैं इस पार नहीं तो उस पार! अब बीच मझधार में पड़े रहने से कोई फ़ायदा नहीं। चलकर मालिक से छुट्टी तो ले लूँ। देखें, मुझे कौन रोकता

है? इन लोगों से तो मेरा पिण्ड छूटेगा। वह अपने 'संघ' के साथ मालिक के घर गया। 'मुझे चिदम्बरम जाकर नटराजजी के दर्शन करना है, कुछ दिन की छुट्टी दीजिये' नन्द ने अपने मालिक से प्रार्थना की।

मालिक भौंहें चढ़ाकर बोला, 'तू चिदम्बरम जाना चाहता है रे? कहीं कोई परया आज तक वहाँ गया है?' यह कहकर मालिक ने एक से इशारे में कहा, 'ज़रा वह चाबुक तो उठा लाओ। आज चिदम्बरम जानेवाले इस पागल को सीधा कर दूँ, यह बदजात नटराज का दर्शन करेगा।'

नन्द ने हाथ जोड़कर कहा—मालिक! आप मुझे मारना चाहते हैं तो भले ही मार डालिये। यह हड्डी-चमड़ी तो आप ही की है, मार डालिये! लेकिन जब तक छुट्टी न दीजियेगा, मेरे जी को चैन नहीं पड़ेगा।

मालिक ने चाबुक मंगवाया। परन्तु नन्द को

मारने की हिम्मत न पडी। वहाँ कुछ लोग जमा हो गये। मालिक लोगों से कहने लगा—आज नन्द को न जाने क्या हो गया है? इतने दिनों तक यह सबसे अच्छा काम करता था। मजदूरों को यही इकट्ठा कर के लाता था। सब इसके कहे में रहते थे। हमारा काम भी ठीक चलता था।

उस भीड़ में से, जो नन्द और उसके मालिक के सामने जमा हो गयी थी, एक बूढ़े ब्राह्मण ने नन्द से सवाल किया—'अरे नन्द! बता रे! तू ईश्वर को मानता है कि नहीं?'

'हाँ, क्यों नहीं? ईश्वर ही तो मेरा सब कुछ है।' नन्द ने जवाब दिया।

बूढ़े ब्राह्मण ने तर्क के साथ फिर सवाल किया—'तू यह भी जानता है न, कि वही ईश्वर सब का कर्ता-धर्ता है?'

नन्द बोला 'हाँ, महाराज, ज़रूर।'

तब तू इस बात को क्यो भूल जाता है कि उसी ईश्वर ने तुझे अस्पृश्य जाति में परया बनाया है। तेरा काम नटराज के दर्शन करना नहीं है। अपने मालिक की चाकरी करना, मेहनत-मजूरी करना, यही तेरा काम है। चिदम्बरम आने की तुझे क्या ज़रूरत है?' वह बूढ़ा बोला।

नन्द ने कहा—'हाँ, महाराज! यह सब मै जानता हूँ। पर, मैं क्या कर सकता हूँ? ईश्वर ने मुझे पागल बना दिया है। मेरे मन में, उस ईश्वर को एक बार, सिर्फ़ एक बार इन आँखों से देख लेने की प्रबल लालसा पैदा हो गयी है। तिरुपुंकर में मैने उसके दर्शन किये थे। क्या धर्म-शास्त्रों में कहीं भी ऐसा लिखा है—ब्राह्मणों का ईश्वर 'परया' के ईश्वर से जुदा है? मुझे अभी कल ही एक ब्राह्मण कथा-वाचक ने बतलाया है कि 'चाहे तो, एक महा चाण्डाल अंत्यज भी चिदम्बरम के नटराज के दर्शन

कर सकता है। उसे मुक्ति भी मिल सकती है।' आप ही की जाति के उन ब्राह्मण पण्डितराज की कही हुई उस बात को मैं कैसे भूल सकता हूँ?'

उस बूढ़े ब्राह्मण के पास एक और ब्राह्मण खड़ा था, नाक-भौं सिकोड़कर बोला—'यह सब शरारत उसी कथावाचक ब्राह्मण की है। उसने इस जिद्दी को बहका दिया है कि चिदम्बरम जाने से नटराज के दर्शन मिलेंगे। जाने दो इसे वहाँ, दो दिन की छुट्टी दे दो। वहाँ जाकर यह आप से आप सीधा हो जायगा।

नन्द के मालिक के खेतों में धान की फसल तैयार खड़ी थी। कटाई का समय था। वह नन्द को, ऐसे मौके पर क्यों छोड़ने लगा? नन्द से बोला, 'पहले मेरी फ़सल काट दे, फिर जहाँ तेरा जी चाहे वहाँ चले जाना।'

मालिक की बात सुनकर नन्द चिदम्बरम जाने को

पागल हो उठा। 'अच्छा, मालिक! तो मैं तुम्हारी फ़सल काटके ही चिदम्बरम जाऊँगा।' यह कह, वह हाथ में हँसिया लेकर फ़सल काटने खेत की तरफ़ दौड़ा। उस रात को वह घर नहीं गया। सारी रात वह मालिक की फ़सल काटता रहा। बड़े भोर जाकर मालिक का दरवाज़ा खटखटाया। बोला,—'मालिक, तुम्हारा काम पूरा कर आया हूँ। तमाम धान काटकर उसके पूले बनाके अच्छी तरह खलिहान में रख दिये हैं। अब तो मुझे छुट्टी दीजिये।'

मालिक को बड़ा आश्चर्य हुआ कि रात भर में इसने पाँच-छः खेत साफ़ कर दिये! बोला—'अरे! तू क्या बकता है? क्या अपने साथ दूसरे मज़दूर ले गया था? ये खेत सारी रात में किस तरह पूरे किये?'

'महाराज, और मज़दूर कहाँ से लाता? मैंने ही लगातार सारी रात जागकर काम किया है।' नन्द ने कहा।

मालिक बोला—'नन्द! तू आज सच-सच कहना। तू कभी झूठी बात नही बोलता। सच कह, क्या बात है?'

'भगवान नटराज ही ने आकर मेरी सहायता की हो, सो तो वे ही जानें। मैंने अपने इन दो हाथो से ही काम पूरा किया। और कोई मेरी मदद करने वहाँ नहीं आया। आप खुद चलकर देख क्यों नहीं लेते? हाथ के कंकण को आरसी क्या? चलकर जाँच लीजिये मेरे काम को, फिर यकीन हो तो मुझे छुट्टी दीजिये।' नन्द ने कहा।

मालिक खेत पर गया। खलिहान में धान के पूलों का बढ़िया ढेर लगा हुआ देखकर वह दाँतों तले उँगली दबाये खड़ा रहा। 'गुल्ली-डंडा खेलने के दिन इसी जगह पर उसने नन्द की कनपटी पर पत्थर मारकर उसे लोहूलुहान कर दिया था।' यह बात भी उसके मालिक को याद आयी। 'नन्द! ओ नन्द!!"

कहता हुआ वह उसकी तरफ़ दौड़ा । नन्द कुछ दूर पीछे हटकर खड़ा हो गया ।

मालिक हाथ जोड़कर नन्द से बोला—'ना, ना, भैया नन्द, तुम मत हटो । तुम सच्चे ईश्वर-भक्त हो । भगवान की तुम पर दया है । मैंने अधिकार मद से तुम पर अत्याचार किया है । नन्द ! तुम मुझे क्षमा करो ।'

नन्द अब बड़े असमंजस में पड़ गया । बोला—'भगवान ने दया की है, आप ऐसा मत कहिये । मैं तो आपका गुलाम हूँ । आपके दिये हुए अन्न-जल से मेरा यह शरीर पला है । मैं ! और आपको माफ़ करूँ ? इससे बड़ा आश्चर्य और कौन सा हो सकता है ? बस, आप ही मुझे दया कर नटराज के दर्शन के लिये छुट्टी दीजिये ।'

मालिक ने कहा—'जाओ भैया नन्द ! खुशी से जाओ । अपने दिल की मुराद पूरी करो । मैं तुम्हें

नहीं रोकता। चिदम्बरम जाओ और भगवान नटराज के दर्शन करो। तुम मेरे लिये भी उनसे क्षमा की प्रार्थना करना।'

चिदम्बरम में

दूसरे दिन नन्द ने अपने संघ को लेकर 'जय नटराज! नटराज की जय!' का नारा बुलन्द करते हुए चिदम्बरम की तरफ़ कूच किया। नटराज के दर्शन के लिये दृढ़-व्रती सत्याग्रही नन्द की यह महान यात्रा थी। रास्ते में झाँझ-मँजीरा और ढोल के साथ भजन-मण्डली भजन करती हुई जा रही थी। सैकड़ों ग्रामीण नर-नारी बड़े हर्ष के साथ उसका और उसके संघ का स्वागत कर रहे थे। अन्त में अन्त्यजों का यह पवित्र यात्री-संघ कई गाँवों में से होता हुआ चिदम्बरम के पास पहुँचा। वहाँ पहुँचते ही नटराज के मन्दिर का सब से ऊँचा कलश नन्द को दिखायी

पडा। कलश को देख कर उसने साष्टांग नमस्कार किया। उसकी आँखों से प्रेम के आँसुओं की धारा बह चली। चिदम्बरम पहुँचते ही नन्द ने अपने साथियो समेत उस ग्राम की परिक्रमा की। फिर वे लोग नटराज के मन्दिर के पास जा पहुँचे। पर मन्दिर के अन्दर नन्द कैसे जा सकता था? मन्दिर की रक्षा के लिये उसके चारों ओर पत्थर की बड़ी ऊँची दीवार सामने खड़ी हुई थी। मन्दिर के आस-पास वैदिक ब्राह्मणों के घर बसे हुए थे। मन्दिर के अन्दर जाना नन्द के लिये मानों अपने सिर पर मौत को बुलाना था। पर वह तो नटराज के दर्शन करने निकल पडा था। चाहे शरीर चला जाय, संकल्प ही सफल हो, अपना सब कुछ तज कर वह परया इस पक्के निश्चय के साथ नटराज के नजदीक आ पहुँचा। उसने गो-रोचन और चमड़ा मन्दिर के अन्दर भेंट में भेजा। पुजारियों ने उसकी भेंट की

हुई चीजें ले लीं, पर उसकी दर्शन करने की प्रार्थना हँसकर उड़ा दी गयी। नन्द ने कथा-वाचक उस ब्राह्मण पण्डित की वह बात कही कि 'एक परया भी नटराज के दर्शन कर सकता है और उसे मुक्ति मिलेगी।'—यह बात 'स्थल-पुराण' में वर्णित है। नन्द की बात सुनकर वहाँ खड़े हुए कुछ लोग बिगड़ पड़े और कहने लगे—हाँ रे! यह बात जो तू कहता है, स्थल-पुराण में है तो सही। पर तू यह तो बतला कि उस कथक्कड़ ब्राह्मण ने क्या यह भी कहा था कि एक परया-अस्पृश्य भी नटराज के मन्दिर में प्रवेश कर सकता है?

नन्द काहे को झूठ बोलता। कथा कहनेवाले उस ब्राह्मण ने ऐसा नहीं कहा था। बेचारा खड़ा रहा। उसे इसी असमंजस में छोड़कर पुजारी लोग अपने काम पर चले गये। रात हुई। चारों तरफ, घरों, गली-कूचों में दीपक जगमगाने लगे। नन्द उस

तमाम रात जहाँ का तहाँ भगवान नटराज के कलश पर ध्यान लगाये खड़ा रहा।

उसी रात को, २९९९ (दो हजार नौ सौ निन्यानबे) पुजारियों को एक ही साथ, एक ही सपना हुआ 'आदनूर का 'पग्या' नन्द मेरे दर्शनों को आया है। वह पवित्र आत्मा है। मन, वाणी और कर्म तीनों में उसके जैसा पवित्र तो कोई भी नही है। वह मेरा परम भक्त है। कल प्रातःकाल मेरे दर्शन के लिये उसे अन्दर ले आना।'

सवेरा होते ही, आपस में मिलकर, सभी पुजारी आश्चर्य के साथ अपने सपने का हाल एक दूसरे को सुनाने लगे। मन्दिर की 'देव-सभा' में विचार-कर्ता इकट्ठे हुए। सभा में नन्द का मामला विचारार्थ उपस्थित हुआ। एक पुजारी बोला—प्रभु नटराज की इसके अन्दर ले आने की आज्ञा हम टाल नहीं सकते। इसकी शुद्धि करनी चाहिये। दूसरा सभासद

कहने लगा—'इस डोम की शुद्धि भी हो सकती है? तुम कैसी बात करते हो?' तीसरा बोला—'नटराज की आज्ञा है। उसका पालन तो हमें तुरन्त करना चाहिये।' चौथे ने कहा—'होमकुण्ड में स्नान कराने से वह शुध्द हो जायगा।' फिर एक विचारक ने कहा—'भला, होमकुण्ड में इस परया की कैसे शुद्धि होगी? एक मामूली आदमी ही उसमें स्नान करने से पवित्र होता है। यह अन्त्यज-अछूत भी कहीं पवित्र हो सकता है? नटराज के पास तो सब ब्राह्मण भी नहीं जा पाते, यह कैसे जायगा?' तब नटराज के मंदिर के प्रधान पुजारी बड़े दीक्षितर बोले—'अग्नि के सिवा और कोई वस्तु इस की देह को शुध्द नहीं कर सकती। पंच महाभूतों में अग्नि ही सर्व-श्रेष्ठ है।' बड़े दीक्षितर की बात सुनकर एक महाशय ने बड़े नखरे के साथ कहा—'तब क्या इस परया को अग्नि में जलाकर उसकी राख को नटराज के पास ले जाइयेगा?'

बडे दीक्षितर गम्भीर होकर बोले—'ना, ना, मेरी बात को दिल्लगी में यो ही मत उडा दो। गोबर के उपले तो जलाकर भी शुध्द कर सकते हैं, पर यह परया किस प्रकार शुध्द होगा, इसी पशोपेश में पडा हूँ। समझ में नहीं आता—क्या करूँ ?

एक विचारशील पुजारी बोला—' महाराज ! जब स्वयं नटराज भगवान ने कहा है कि यह मन, वाणी और कर्म से परम पवित्र है, क्या हम में से कोई इसके जैसा पवित्र होने का दावा कर सकता है ? यह तो सिर्फ़ जन्म से चाण्डाल मालूम होता है, कर्म से नहीं। नन्द तो नटराज का कोई महान भक्त है। यह जितना सावधान, साफ़-सुथरा और सत्य-भाषी है उतना तो एक ब्राह्मण भी नहीं होता। इसके हृदय में नटराज के दर्शन करने की चिनगारी सुलग रही है। जो कहीं हमारी तरफ़ से रुकावट डाली गयी तो विरह की बारूद ऐसी धधक उठेगी कि

उसमें हमारा ब्राह्मणत्व और अहंकार भस्म हो जायगा। नन्द को दर्शन करने दिया जाय जिससे नटराज-स्वामी अखण्ड सन्तोष पावें। नन्द सच्चा शरणागत भक्त है। इसे अग्नि से शुध्द करने का मतलब इतना ही है कि हम इसके लिये हवन करें और इसे मन्दिर के अन्दर ले जावें।'

इससे सब पुजारियों को संतोष न हुआ। वे लोग आपस में काना-फूसी करने लगे—'अगर यह 'परया' इतना शुद्ध है तो फिर यह आग में जलेगा ही क्यों? सच्ची परीक्षा तो यही है कि आग में इसे डालने पर भी यदि इसको कुछ आँच न आवे तभी समझना चाहिये कि यह परम शुध्द है।'

नटराज के पुजारियों की इन बातों का पता नन्द को लगा। वह हर्ष के मारे तुरन्त उन्मत्त होकर नाचने लगा। उसके साथी तो डर गये। वे आग में जल मरने की बनिस्बत अपनी जान बचाकर घर जाने की

सलाह देने लगे। नन्द भला, क्यों अपने दृढ़ निश्चय से पीछे हटने लगा। उसने बड़े दीक्षितर को कहलवा दिया—'मैं अग्नि में शुद्ध होऊँगा। आग जला कर तैयार करो। मैं प्रज्वलित होम-कुण्ड में स्नान करने के लिए तैयार होकर आता हूँ। यदि नटराज मुझे अग्नि में जलाकर भस्म कर डालें तो भी हर्ज क्या है? मुझ परया का यह निन्दनीय जीवन रहा तो क्या, न रहा तो क्या?'

९

अग्नि-परीक्षा

मन्दिर के सामने मुख्य द्वार पर बड़ी भीड़ जमा थी। बित्ते भर भी जमीन खाली न थी। नर नारी, जवान बूढ़े—सारी जगह दर्शकों से खचाखच भरी हुई थी। नन्द ने तेप्पकुलम * (सरोवर) में स्नान

---

* दक्षिण देश के तीर्थ-क्षेत्रों और मंदिरों के सामने या पीछे जो तालाब रहते हैं उन्हें तेप्पकुलम कहते हैं—लेखक।

किया, शरीर में भस्म रमायी, ललाट पर चंदन की खौर लगायी और गले में रुद्राक्ष की माला पहनी। उसकी अवस्था उस समय बिलकुल विचित्र थी। गीला वस्त्र पहने हुए ही वह अग्नि-कुण्ड में प्रवेश करने को तैयार हो गया। कुंड में प्रचण्ड अग्नि धाँय धाँय जल रही थी। मंदिर के पुजारी थोड़ी दूर पर तमाशा देखने के लिए खड़े थे। नन्द ने तीन बार अग्नि-कुंड की प्रदक्षिणा की। नटराज का नाम जपते-जपते मंदिर के कलश को प्रणाम किया। धोती का कछोटा ऊँचा बाँधकर नन्द बोला—'हे नटराज! यदि मैं मन, वचन और कर्म से पवित्र हूँ, यदि मैंने किसी प्राणी की हिंसा न की हो, यदि तुम ही सच्चे सब के अन्तर्यामी ईश्वर हो, मैं तुम्हारे सिवाय और किसी को नहीं जानता, तो अब मेरी अन्तिम बात रखो, मेरे लिये यह चिता, यह अग्निकुण्ड, तैयार है। इस अग्निकुण्ड की धधकती आग ही एकमात्र मेरे लिये शरण है।

मैं अब तुम्हारे वियोग में, तुम्हारे दर्शन बिना जीवित रहना नहीं चाहता, मैं अग्नि में प्रवेश करके इस शरीर का अन्त करूँगा। हे मंगलमय नटराज, यदि ब्राह्मण और परया के तुम्हीं ईश्वर हो तो इस अग्नि की भयंकर ज्वाला मेरे लिये तेप्पकुलम के जल की तरह शीतल हो जाय।'

हजारों मनुष्य मूर्ति की तरह अचल होकर इस दृश्य को देख रहे थे। कुण्ड की अग्नि धधक उठी। सभी उस धधकती आग की लपकती लपट को टकटकी लगाकर देख रहे थे। नन्द हँसता हँसता, नटराज का नाम रटता रटता 'धम्म' से अग्निकुण्ड में कूद पड़ा। आग की लपलपाती ज्वालाओं ने कुछ क्षण के लिय नन्द को ढक लिया। अग्नि में घी डाल देने से जैसे वह और भी धधक उठती है उसी प्रकार अग्निकुण्ड ने नन्द को पाकर और भी जोर पकड़ लिया। बच्चे, बूढ़े, सभी दर्शक, 'हे नटराज, बचाओ इसे'—जोर ज़ोर

से चिल्लाने लगे। आकाश हृदय-विदारी जन कोलाहल से गूँज उठा। सबकी आँखों से आँसू निकल पड़े। इतने ही में नन्द प्रफुल्ल और प्रसन्न-वदन अग्नि-कुण्ड से निकलकर उस पार खड़ा हो गया। 'नटराज की जय! हर हर महादेव!!' के बलंद नारों से आकाश भर गया। नन्द की अग्नि-परीक्षा समाप्त हुई। उसका एक बाल भी बाँका न हुआ। उसका वह गीला कपड़ा, जिसे पहने हुए वह आग में कूद पड़ा था, अग्निकुण्ड से बाहर निकलने पर ज्यों का त्यों गीला था। नन्द पर असंख्य दर्शकों ने प्रेम और भक्ति-भाव से फूल बरसाये।

अब ब्राह्मणो और पुजारियों का भी घमंड चूर हो गया। उन्होंने नन्द को अपना सिर झुकाकर नमस्कार किया। बड़े दीक्षितर ने आगे बढ़कर नन्द से कहा—'पधारिये मन्दिर के अन्दर, भगवान नटराज आपकी बाट जोह रहे हैं, चलकर दर्शन कीजिये।' यह कहकर वे उसे मंदिर में ले गये।

अन्दर ले जाते समय दीक्षितर बोले—'क्या जन्म और जाति? भगवान के दरबार में सत्य, प्रेम और अहिंसा का ही बोलबाला है।'

नन्द ज्यों ही नटराज के पास पहुँचा, आपसे आप मन्दिर का घण्टा और नौबत बज उठी। शंखनाद हुआ। पुजारियों ने भगवान की आरती उतारी। नन्द नटराज के अखण्ड दर्शन से अपने शरीर और आँखों को तृप्त करता हुआ हाथ जोड़े निस्तब्ध, निश्चेष्ट, खड़ा रहा। नर और नारायण, भक्त और भगवान, दोनों धन्य हुए।

१०
प्रतिष्ठा

तमिल प्रान्त में पहले ६२ शैव सन्त माने जाते थे। उस दिन से उनके बीच ६३ वीं मूर्ति सन्त नन्दनार की भी स्थापित हुई। दक्षिण के अनेक तीर्थ-स्थानों के मन्दिरों में भक्त-प्रवर नन्द की मूर्ति स्थापित है और दूसरी देवमूर्तियों की भाँति उसकी

भी ईश्वर के समान पूजा होती है। उसके नाम के उच्चारण मात्र से पापियों के पाप जलकर भस्म हो जाते हैं। तमिल भाषा के साहित्य में नन्दनार का साधु चरित्र अपना एक विशेष महत्वपूर्ण स्थान रखता है। तमिल देश के बड़े बड़े भागवतर, (हरिकथा कहनेवाले) कथावाचक और कीर्तनकार उसकी कथा सुमधुर संगीत में गाते हैं, हजारों श्रोता ध्यान-मग्न हो उसे प्रेमभाव से सुनते हैं। संसार का मङ्गल करनेवाली, भक्तों के मन को मुग्ध करनेवाली, गङ्गा माता की तरह पावन करनेवाली नन्दनार की कहानी आरम्भ से लेकर अन्त तक मङ्गलमय, पुण्यमय है, और दक्षिण-भारत में आबाल-वृद्ध उसके विशुध्द चरित्र से परिचित हैं। हमें भी यही पक्का विश्वास अपने हृदय में जमा लेना चाहिये कि भगवान के दरबार का दरवाज़ा रात-दिन, सर्वदा, सब के लिये, खुला रहता है।

समाप्त